Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Impact Factor (IIJIF): 5.454 | Vol. 8, Issue 1 | May. 2020 - October 2020 | pp. 140-144

# नेहरू का स्वतन्त्रता आन्दोलन में योगदान

**अन्नपूर्णा शर्मा**
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

**शोध सारांश**

*पण्डित जवाहरलाल नेहरू की पारिवारिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि उनके पिता मोतीलाल नेहरू भारतीय राजनीति में अपना विशिष्ट महत्त्व रखते थे। उच्च शिक्षा के लिए पण्डित नेहरू मात्र 15 वर्ष की आयु में अध्ययन के लिए इंग्लैण्ड चले गए। लेकिन जैसे-जैसे उम्र बढ़ी, अंग्रेजी शिक्षा के अध्ययन के साथ-साथ भारतीय राजनीति की ओर भी उनका झुकाव शुरु हुआ। नेहरू जब किशोर ही थे उनमें राष्ट्रीय भाव अंकुरित हो गए थे। वे भारतीय राजनीति में चल रही उस उथल-पुथल के एकमात्र दर्शक नहीं बने रहना चाहते थे वरन वे उसके सजीव पात्र बनने के लिए उत्सुक थे। उस समय भारत में राजनीतिक गतिविधियाँ तेज होती जा रही थीं और नेहरू उसमें अपनी साहसिक भूमिका निभाना चाहते थे।*

**संकेताक्षर :** *राष्ट्रवादियों, उदारवादियों, राजनीतिक गतिविधियाँ, सत्याग्रह, क्रान्ति, अधिवेशन, स्वराज्य, गोलमेज सम्मेलन*

**प्रस्तावना**

कैम्ब्रिज में जिन पुस्तकों ने पण्डित नेहरू पर राजनीतिक दृष्टि से प्रभाव डाला, उनमें थीं - मैरेडिथ टाउनशैड, की पुस्तक 'एशिया एण्ड यूरोप'। पण्डित नेहरू को तब यह अहसास हुआ कि कथनी और करनी में कितना अन्तर होता है। निजी बातचीत में भारतीय छात्र जब भारतीय राजनीति की चर्चा करते तो बड़ी कड़ी भाषा का प्रयोग होता और हिंसा के कार्यों की प्रशंसा की जाती लेकिन बाद में वे ही भारतीय सिविल सर्विस के सदस्य, बड़े गम्भीर और स्थिर चित्त वकील तथा हाईकोर्ट के न्यायाधीश बने। पण्डित नेहरू भारत और एशिया को यूरोप के साम्राज्यवादी शिकंजे से स्वतन्त्र कराने के लिए आतुर रहते थे और किस प्रकार स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करेंगे, की वीर भावनायें उनके मानस में उभरती थीं। भारत के 1906 और 1907 के समाचार पत्रों ने तो उन्हें बहुत व्यथित किया। पंजाब, बंगाल, महाराष्ट्र में लाला लाजपत राय और अजीतसिंह का देश निष्कासन, बंगाल में हाहाकार, पूना में तिलक का नाम चमकना तथा स्वदेशी और बहिष्कार की आवाज आदि घटनाएं घटी ही थीं। उनके मस्तिष्क को इन सब बातों ने झकझोर दिया। वे भारतीय राजनीति में चल रही उस उथल-पुथल के एकमात्र दर्शक नहीं बने रहना चाहते थे वरन वे उसके सजीव पात्र बनने के लिए उत्सुक थे। कैम्ब्रिज में भारतीय छात्रों से जो लोग मिलने आए, उनमें विपिन चन्द्रपाल, लाला लाजपत राय और गोपाल कृष्ण गोखले थे। उसी समय से वे तिलक के अनुयायी हो गये थे। इंग्लैण्ड से लौटने पर पण्डित नेहरू को लगा कि भारत राजनीतिक दृष्टि से सुस्त है। राजनीतिक नेता दो दलों में विभक्त थे - गरम और नरम। गरम दलीय वे लोग थे, जो अंग्रेजों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करना चाहते थे; नरमदलीय वे थे जिनका 'तर्क' में विश्वास था। गरम दल वालों का उस समय कोई नेता न था, क्योंकि तिलक जेल में थे। तिलक की ओर नेहरू की रुचि देखकर मोतीलाल नेहरू को चिन्ता होने लगी, किन्तु नेहरू का आकर्षण बंगाल के नवयुवकों के हिंसात्मक क्रियाकलापों के प्रति बिल्कुल नहीं था।

भारतीय राष्ट्रवादियों का कांग्रेस संगठन उस समय नरम दलीय था। वहीं दूसरी ओर नेतृत्व के अभाव में उग्रदल क्षत-विक्षत पड़ा था और अकर्मण्यशील बना हुआ था। बंगाल शान्त था और सरकार उदारवादियों को मिंटो-मार्ले योजना के क्रियान्वयन के कारण अपनी ओर मिलाने में सफल हो गई थी।[6] कांग्रेस के

वार्षिक अधिवेशन और उनमें पारित प्रस्ताव भारतीय जनमानस को कोई विशेष प्रभावित नहीं कर पाते थे। भारतीय राजनीति में पण्डित नेहरू ने सर्वप्रथम सक्रिय भूमिका कांग्रेस अधिवेशन से अदा की। सन् 1912 में बांकीपुर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें नेहरू एक प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए। लेकिन इस अधिवेशन का उनके तरुण मानस पर विपरीत प्रभाव पड़ा। उन्हें यह अधिवेशन राजनीतिक सभा की अपेक्षा सामाजिक अधिक प्रतीत हुआ। पण्डित नेहरू के अनुसार-'यह अंग्रेजी शिक्षा में पले उच्च वर्ग का धन्धा था।' इस आडम्बरी शुष्क वातावरण में आकुल एवं अनिश्चित नेहरू को अनुभूति हुई कि भारत का राजनीतिक संसार वास्तविकता में कितना दूर है। इंग्लैण्ड के प्रवास काल में वे इसे हलचल, उत्साह, सन्देह, त्याग और उद्योग से परिपूर्ण समझते थे। किन्तु यहाँ सभी कुछ विपरीत था। एकमात्र शुष्कता ही न होकर अत्यधिक असाधारण भी था। नेहरू के लिए यह अप्रत्याशित भी था। नेहरू के लिए यह अप्रत्याशित स्थिति घुटन की थी। इतना होने पर भी नेहरू जी ने धीरे-धीरे राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना शुरू किया। जनता में बोलने से वे हिचकते थे। सन् 1915 में उन्होंने इलाहाबाद में अपना पहला सार्वजनिक भाषण दिया। एक नए कानून के विरोध में हुई सभा में उन्होंने यह भाषण दिया था, यह भाषण अंग्रेजी में संक्षिप्त किन्तु प्रभावशाली भाषण था।

सन् 1916 में लखनऊ में आयोजित कांग्रेस अधिवेशन में पहली बार पण्डित नेहरू की महात्मा गाँधी भेंट हुई। किन्तु यह भेंट औपचारिक ही रही। सन् 1919 में रोलट एक्ट के दमन चक्र ने गाँधीजी को व्याकुल कर दिया और उन्होंने उसका अविलम्ब विरोध किया। पण्डित नेहरू को लगा कि गाँधीजी का यह कार्य उन्हीं के विचारों के अनुरूप है। नेहरू ने इस योजना में अपने विचारों का प्रतिरूप देखा। उन्हें लगा कि यही व्यक्ति मेरा गुरू हो सकता है। उन्हें राह मिली। उन्हें यह तरीका सीधा, खुला और शायद कारगर लगा था। परन्तु उनके पिता मोतीलाल नेहरू नये विचारों के सख्त खिलाफ थे। उनका कहना था कि नया कदम उठाने से पहले उनके नतीजों को अच्छी तरह गौर किया जाय। गाँधीजी ने भी नेहरू को जल्दबाजी में कोई फैसला न करने के लिए परामर्श दिया था। इसी दौरान जब जलियांवाला हत्याकाण्ड हुआ। इस अमानुषिक क्रूर घटना ने मोतीलाल नेहरू को द्रवित कर दिया और उन्होंने गाँधीजी के नेतृत्व को कबूल कर लिया।

1920 में गाँधीजी द्वारा चलाए गए 'असहयोग आन्दोलन' में नेहरू ने अपने आप को पूरी तरह झोंक दिया। उनके जोश की कोई सीमा नहीं थी। वे अन्यों से उत्साहित होते और साथ ही दूसरों को आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते। नेहरूजी की दृष्टि में अहिंसात्मक असहयोग देश के लिए सर्वाधिक उपयुक्त साधन था। नेहरू यद्यपि अहिंसा में पूर्ण आस्था नहीं रखते थे, फिर भी इस आन्दोलन का उनके लिए सर्वाधिक महत्त्व था। सुदूर गाँवों तक नेहरू अपने सन्देश ले जाते थे और भूखे-नंगे किसानों की घोर गरीबी ने उनकी आँखें खोल दी। जवाहर लाल नेहरू और मोतीलाल नेहरू दोनों ने कांग्रेस के स्वयं सेवक दल की सदस्यता ग्रहण कर ली। इस दौरान ब्रिटिश माल का बहिष्कार सम्बन्धी पर्चा वितरण के अपराध में बन्दी बना लिया गया। चौरा-चौरी नामक गाँव के समीप जमा भीड़ ने पुलिस स्टेशन में आग लगा दी जिसके फलस्वरूप लगभग आधे दर्जन पुलिस सिपाही जल गए थे। इस घटना से आहत होकर गाँधीी ने असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया। इस निर्णय से नेहरू जी को बहुत दु:ख हुआ और उन्हें अपनी बढ़ती उमंगें धूमिल होती दिखाई दीं।

सभी कांग्रेसियों से भिन्न नेहरूजी को लग रहा था कि सत्याग्रह से क्रान्ति को वास्तविक अथवा सांकेतिक रूप से उतना उत्साहपूर्ण बल नहीं मिल सकता, जितना किसानों के प्रतिरोध से। नेहरू जी गाँव-गाँव घूमे और सुलतानपुर स्थित गाँवों में उन्होंने ग्रामीण भारत के भयावह दृश्य का अवलोकन किया। वहाँ के किसान विद्रोह करने को आतुर थे। यही तो असली भारत था - स्थिति पूरी तरह स्पष्ट हो गई। जवाहर लाल जी ने किसानों में अभिव्यक्ति प्रकाश देखा। उन्होंने उन किसानों के बीच भारतीय जनशक्ति का ही अनुभव नहीं किया बल्कि अपनी खुद की प्रचुर शक्ति और कठोर परिश्रम करने की क्षमता का भी अनुभव किया। साइमन कमीशन के विरुद्ध उठे आन्दोलन ने कांग्रेस में नवीन अनुशासन ला दिया। कभी-कभी गोलियां चलीं पर प्रदर्शनकारियों की भीड़ को तितर-बितर करने के लिए आमतौर पर लाठियों का प्रहार किया जाता था। एक बार लखनऊ में इस प्रदर्शन का नेतृत्व करते हुए जवाहर लाल जी को गहरी चोट आई, यह चोट अधिक स्थाई नहीं थी। इसी दौरान लाला लाजपत राय के सीने पर तो ऐसी पाशविक मार पड़ी कि उनका देहान्त हो गया। मार्च 1929 में कोलकाता की सड़क पर विदेशी कपड़ों की होली जलवाने के अपराध में गाँधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया। जन-सुरक्षा और व्यापार-विवाद जोशीली बहसें चल रही थीं। अध्यक्ष पटेल ने बार-बार चुनौती दी।

सन् 1930 का आन्दोलन होने वाला था और ब्रिटिश शासन था। बहुत कुछ सर्वसम्मति से यह सुझाव आया कि कांग्रेस का अध्यक्ष गाँधीजी को बनाया जाए। इस सुझाव का समर्थन विशेष रूप से मोतीलाल जी कर रहे थे। किन्तु गाँधीजी ने इसे अस्वीकार कर दिया। अगर गाँधीजी ने अध्यक्ष बनना स्वीकार नहीं किया

ISSN 2348-3857

तो मोतीलालजी की राय थी कि युवकों का प्रतीक होने के नाते जवाहरलाल नेहरू को यह पद स्वीकार कर लेना चाहिये। जवाहर लाल ने अध्यक्ष बनने के दबाव का विरोध किया, उन्होंने गाँधीजी को लिखा था-''मैं अपने को छोड़कर किसी का प्रतिनिधित्व नहीं करता। मुझमें राजनीति जैसी वह प्रवृत्ति नहीं कि गुट और पार्टियां बना सकूं।'' गाँधीजी भी मानने वाले नहीं थे। वल्लभ भाई पटेल ने अपना नाम वापस ले लिया। कांग्रेस की महासमिति ने अपनी लखनऊ की बैठक में कोई व्यक्ति नहीं मिलने और लाचारी में जवाहर को अध्यक्ष चुना। उनके अध्यक्ष पद पर आसीन होने पर स्वयं को तो कोई सन्तुष्टि नहीं थी किन्तु उससे देश के युवक बड़े जोश में थे क्योंकि जवाहर लाल नवीनता के प्रतिनिधि थे और न हो वे स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए साधन बन गए।

फिर गाँधीजी ने 1930 सविनय अवज्ञा आन्दोलन को प्रारम्भ करने से पूर्व यह स्पष्ट कर दिया था कि एक-दो हिंसात्मक घटनाओं के कारण आन्दोलन स्थगित नहीं किया जाएगा। देश बन्धु चितरंजन दास ने नेहरू को स्वराज्यवादियों के मत बनाने का प्रयत्न किया था किन्तु वे अप्रभावित रहे। इतना होने पर भी नेहरू की प्रगाढ़ मित्रता ने स्वराज्य पार्टी को मजबूती के साथ स्थापित करने तथा सुदृढ़ बनाने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। दिसम्बर 1928 में कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में हुआ और मोतीलाल नेहरू उसके अध्यक्ष निर्वाचित हुए। पिता-पुत्र में औपनिवेशिक स्वराज्य को लेकर मतभेद हो गया था। जवाहरलाल नेहरू पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्ष में थे जबकि मोतीलाल नेहरू औपनिवेशिक स्वराज्य के। कांग्रेस के मंच से दोनों ने सार्वजनिक रूप से एक-दूसरे के विचारों पर प्रहार किया।

अन्त में गाँधीजी ने एक समझौता प्रस्ताव रखा जिसमें ब्रिटिश सरकार को औपचारिक स्वराज्य भारत को एक वर्ष के अन्दर देने को कहा गया था और ऐसा न किए जाने पर कांग्रेस पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा कर देगी, यह चेतावनी दे दी गई थी। कांग्रेस का 45वां अधिवेशन सन् 1929 में लाहौर में जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। यह अधिवेशन 25 दिसम्बर से 31 दिसम्बर तक चला। इसमें सन्देह नहीं है कि भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति की दिशा में यह समय अत्यधिक पेचीदा और संघर्षपूर्ण था। इसमें भी सन्देह की तनिक गुंजाईश नहीं है कि भारतीय कांग्रेस के इतिहास में यह अधिवेशन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण था क्योंकि इस अधिवेशन में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। अब से कांग्रेस का लक्ष्य पूर्ण स्वतन्त्रता-प्राप्ति हो गया था। सन् 1929 को 31 दिसम्बर के ठीक रात बारह बजकर एक मिनट पूर्ण स्वराज्य का लक्ष्य तालियों और हर्षोल्लास के मध्य रावी के तट पर घोषित किया गया।

1919 की घटनाओं की याद में प्रतिवर्ष राष्ट्रीय सप्ताह मनाया जाता है। उस सप्ताह के प्रथम दिन 6 अप्रैल को गाँधीजी के नमक बनाने और समस्त कांग्रेस कमेटियों को अपने-अपने क्षेत्रों में सविनय अवज्ञा आन्दोलन चालू करने की छूट दी थी। इसी के चलते 14 अप्रैल को जवाहरलाल नेहरू को गिरफ्तार किया गया, जेल में मुकदमा चला और नमक कानून के अन्तर्गत उन्हें छ: महीने की सजा दी गई। छ: महीने की सजा का समय समाप्त होने पर जवाहर जी को अक्टूबर में रिहा कर दिया गया। जेल से बाहर निकलते ही नेहरू पुन: आन्दोलन में लग गए। उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने 'कर न दो' आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। इन स्थितियों में सरकार नेहरू जी को खुला छोड़ने से घबरा रही थी। देहरादून में धारा 144 के अन्तर्गत उनको आज्ञा मिली। जब वे लखनऊ में गाड़ी से उतरे तब धारा 144 के अन्तर्गत ही दूसरी आज्ञा उनको दी गई। दूसरे दिन इलाहाबाद पहुँचने पर उन्हें तीसरा आज्ञा पत्र मिला। जवाहर जी ने किसान सम्मेलन में भाग लिया और वहाँ उनका भाषण हुआ। उसके बाद वे किसान और अन्य नागरिकों की सभा में भाग ले चुके तब उन्हें वहाँ नैनी जेल के पुराने स्थान पर ले जाया गया। एक ही भाषण के सम्बन्ध में उन पर कई अभियोग लगाए गए। राजद्रोह के अपराध में 18 महीने की कड़ी सजा और 500 रुपये जुर्माना नमक कानून के अन्तर्गत छ: महीने की सजा और 100 रुपये जुर्माना तथा 1930 के अध्यादेश 6 के अन्तर्गत छ: महीने की सजा और 100 रुपये जुर्माना उन पर किया गया। अन्तिम दो सजाएं साथ-साथ थीं। सब मिलाकर दो वर्ष की कड़ी कैद और जुर्माना न देने पर पाँच महीने की कैद और भुगतनी थी। यह उनकी पाँचवी जेल यात्रा थी। इस पर 16 नवम्बर को जवाहर-दिवस मनाने की घोषणा कर दी गई। तमाम देश में जहाँ-जहाँ जवाहर दिवस मनाया गया, वहाँ-वहाँ जवाहर जी के उस राजद्रोही भाषण अथवा उसके अंश को सभाओं में पढ़ा गया, जिनके कारण उनको सजा दी गई थी।

इसी समय प्रथम गोलमेज सम्मेलन लन्दन में हुआ। लन्दन के सम्मेलन में कमेटियाँ बनीं जिसमें संविधान के अलोकतन्त्रीय मसौदे पर अनेक पहलुओं से विचार किया गया। जेल में बैठे कांग्रेसियों के लिए यह सब अवास्तविक तथा ढोंग था। जवाहरलाल जी भारतीय राष्ट्रीयता के अनेक घटकों के सम्बन्ध में गहन विचार में मग्न थे कि किस प्रकार राष्ट्रीयता के नाम पर हर व्यक्ति अपने को देशभक्त बताकर ब्रिटिश प्रतिनिधियों के साथ देश के भविष्य

के बारे में विचार-विमर्श कर रहा है। जेल में रहते हुए पण्डित नेहरू और उनके साथियों को बाहर की घटनाओं के बारे में अधिक जानकारी नहीं थी और अगला स्वतन्त्रता दिवस निकट आ रहा था। गोलमेज सम्मेलन में व्यक्त आम राय थी कि अगले सम्मेलन में कांग्रेस को शामिल किया जाए और इसी के अनुसार कांग्रेसी नेताओं को रिहा किया जा रहा था। गाँधीजी और नेहरू जी मुक्त हो गए थे। जवाहर जी के जीवन में जेल से मुक्ति के पश्चात् एक विकट समस्या आने वाली थी। मोतीलाल जी की हालत पहले से अधिक खराब हो गई थी, उनके स्रदय, फेंफड़े और जिगर खराब हो गए थे। विशेष चिकित्सा की सुविधा और पूरे ईलाज के बावजूद 6 फरवरी को उनका देहान्त हो गया।

उस समय के अन्य कांग्रेसी से भिन्न पण्डित नेहरू अपने को निराला नहीं मानते थे। वे अपने को आम जनता जैसा ही मानते, उसी के साथ चलने वाला, जनता से प्रभावित रहने वाला और फिर भी अन्य किसी इकाई की तरह, औरों से अलग, एक व्यक्ति के रूप में समझते। लेकिन कांग्रेस में वे नीवन चेतना धारा के प्रतिनिधि थे। यद्यपि उनका काफी समय जेल में बीता, फिर भी उनमें परितोष की भावना थी। पण्डित नेहरू ने बाद में कहा था - ''अगर उन्हें अपना जीवन बिताने का पुन: मौका मिले तो वे अपने व्यक्तिगत जीवन में अनेक प्रकार की फेरबदल और पूर्व की अपेक्षा उनमें अनेक तरह के सुधार करने की कोशिश करें, लेकिन सार्वजनिक जीवन में उन्होंने जो विशेष निर्णय किये हैं, वे वैसे ही रहेंगे, जैसे - ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध प्रतिरोध, सविनय अवज्ञा आन्दोलन में कूदकर जेल जाना और उस सिलसिले के अनेक सिरदर्द तथा गाँधीजी के पदचिह्नों पर चलकर आजादी की लड़ाई लड़ना। इस प्रकार भूतकाल के बारे में पूर्ण आश्वस्त थे तथा भविष्य के लिए पूरी तरह तैयार। जवाहर जी की व्यक्तिगत समस्याएँ और कष्ट समाप्त होने का नाम ही नहीं ले रही थीं। उनका संघर्ष व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों थे। मई 1935 में कमलाजी के स्वास्थ्य में गिरावट होने पर उन्हें यूरोप भेज दिया गया। वहाँ उनकी हालत चिन्ताजनक हो गई और पण्डित नेहरू को साढ़े-पाँच माह पहले 4 सितम्बर को जेल से रिहा कर दिया गया, जिससे कि वे जर्मनी के स्वार्जवाल्ड स्थित बेडनवेलर में उनके पास जा सकें, फरवरी 1936 में कमला नेहरू का निधन हो गया।

राजनीतिक दृष्टि से नेहरू अकेले पड़ गए। विभिन्न दलों और गुटों में उनका कोई तालमेल नहीं बैठता था। उनकी सभाओं में भारी भीड़ पड़ती। इतना सब होने पर भी उनकी सोच का ढंग अवैयक्तिक था। कांग्रेस के निर्णय के प्रति वफादार रहते हुए भी वे उनके कुछ अन्य पहलुओं पर जोर देते। अन्त में उन्होंने त्यागपत्र देने का निश्चय कर लिया। सन् 1936 में लखनऊ अधिवेशन में उन्हें फिर से अध्यक्ष चुना गया। 1942 में ब्रिटेन से ब्रिटिश संसद के श्रमिक सदस्य स्टेफर्ड को कांग्रेस को मत से विभाजित करने और भारतवासियों को मित्र राष्ट्रों के पक्ष में करने के लिए भारत भेजा। क्रिप्स प्रस्तावों के प्रावधान थे जो पूर्ण स्वराज्य की अपेक्षा औपनिवेशिक स्वराज्य की प्रतिष्ठा करते थे। इसके अतिरिक्त संविधन सभा में प्रतिनिधियों की अपेक्षा शासकों या राजाओं का होना था और इस प्रस्ताव ने भारत विभाजन की मान्यता दे दी थी। कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया था और गाँधीजी ने कार्यकारिणी को इस पोस्टडेटेड चैक को अस्वीकृत करने की सलाह दी। उन्होंने पण्डित नेहरू को लिखा कि - ''यह प्रस्ताव अग्राह्य है और ये देश को बर्बाद कर देंगे यदि तुम्हारे ऐसे विचार हैं तो राजगोपालाचार्य से विचार करके अन्तिम निर्णय लो।'' दोनों ने क्रिप्स प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

मार्च 1946 में कैबिनेट मिशन भारत आया जसका उद्देश्य सभी भारतीय राजनीतिक दलों से परामर्श करके एक सर्वसम्भव हल खोजना था। कांग्रेस भारत विभाजन के पक्ष में नहीं थी और मुस्लिम लीग ने परस्पर विरोधी मांगें रखी थीं। फलत: केबिनेट मिशन ने अपनी योजना रखी। जिससे लीग की भारत विभाजन की मांग को अव्यावहारिक बताया। इसके स्थान पर भारतीय संघ बनाये जाने के निर्णय की घोषणा की जिसमें ब्रिटिश इण्डिया के प्रान्त व देशी रियासतें होंगी। संविधान सभा को केबिनेट मिशन की एक बहुमूल्य देन माना। उनकी दृष्टि में में प्रान्त समूह का निर्माण दोषपूर्ण था। 25 जून को कांग्रेस के कार्यकारिणी की बैठक में इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया था क्योंकि इसमें अपने राष्ट्रीय स्वरूप का पूर्णत: परित्याग करना असम्भव था।

**निष्कर्ष**

12 अगस्त 1946 को केन्द्र में अन्तरिम सरकार निर्माण हेतु आमन्त्रित किया। नेहरू ने इसमें मुस्लिम लीग के प्रतिनिधित्व के लिए एक बार फिर प्रयास किया किन्तु वे असफल रहे। उनके सम्मुख यही एक विकल्प था कि वे बिना लीग के अन्तरिम सरकार का निर्माण करें। 24 अगस्त 1946 को प्रथम अन्तरिम सरकार की घोषणा करके नेहरू ने एक नए अध्याय का प्रारम्भ किया। नेहरू संकट तथा भ्रान्ति से चिंतित थे जिसे उन्हें घेर रखा था। वे जानते थे कि स्वतन्त्रता सन्निकट है और यह दिखाई देता है कि प्रत्येक की बौद्धिक पकड़ से यह पलायन कर रही है। उन्होंने कहा कि ''भारत विभाजन से हमारी मानसिक उलझनें दूर हो जाएंगी। किन्तु इस शर्त पर कि भारत के दूसरे भाग जो शामिल होना चाहते हैं वे उन्हें नहीं लें।''

ISSN 2348-3857

**सन्दर्भ सूची**


1. नेहरू, जवाहरलाल, मेरी कहानी, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, 1982, पृ.सं. 36.
2. उपर्युक्त, पृ.सं. 44
3. उपर्युक्त, पृ.सं. 46
4. वीरवानी, सक्सेना, पुष्पा, राजेश्वरी, भारतीय राजनीतिक विचारक, शील सन्स, 2000, पृ.सं. 421
5. नेहरू, जवाहरलाल, मेरी कहानी, पूर्वोक्त, पृ.सं. 42
6. मंगलानी, डॉ. रूपा, भारतीय राजनीति, राजस्थान हिन्दी साहित्य अकादमी, 2007
7. भटनागर, डॉ. राजेन्द्र मोहन, भारतीय कांग्रेस तब और अब, इण्डियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 295
8. उपर्युक्त, पृ.सं. 303
9. शर्मा, डॉ. वेदव्रत, जवाहरलाल नेहरू, एक समाजवादी दार्शनिक, नई दुनिया प्रिन्टर्स, इन्दौर, पृ.सं. 3.
10. मोरिस फ्रेक, जवाहरलाल नेहरू, एक जीवनी, (अनुवाद : जगत शंखधर), सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, मैकमिलन, न्यूयॉर्क, पृ.सं. 86
11. जैन, रस्तोगी, डॉ. पी.सी., डॉ. अशोक, ''आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, राधा पब्लिकेशन्स, 2005, पृ.सं. 435
12. मिश्रा, संध्या, मोतीलाल नेहरू और भारतीय राजनीति, नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ.सं. 36
13. दारदा, डॉ. आर.एस., नेहरू - ए पैनोरेमिक प्रोफाइल, हिमान्शु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 1989, पृ.सं. 59
14. लिमये, मधु, महात्मा गाँधी एण्ड जवाहरलाल नेहरू, बी.आर. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, दिल्ली, 1989, पृ.सं. 206
15. राव, एम. चेलापति, आधुनिक भारत के निर्माता - जवाहरलाल नेहरू, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 2004, पृ.सं. 63
16. जैन, रस्तोगी, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तक, पूर्वोक्त, पृ.सं. 186
17. लिमये, मधु, पूर्वोक्त, पृ.सं. 142
18. उपर्युक्त, पृ.सं. 149
19. ग्रोवर, विरेन्द्र, पॉलिटिकल थिंकर ऑफ मॉडर्न इण्डिया, जवाहरलाल नेहरू, वॉल्यूम (X), दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1990, पृ.सं. 365
20. भटनागर, डॉ. राजेन्द्र मोहन, ''भारतीय कांग्रेस तब और अब, इण्डियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 199
21. उपर्युक्त, पृ.सं. 200
22. लिमये, मधु, पूर्वोक्त, पृ.सं. 112
23. नेहरू वाङ्मय, भाग - 3, गोपाल (एस.) सम्पादक, जवाहर मेमोरियल फण्ड, तीनमूर्ति हाऊस, नई दिल्ली, 1985
24. शर्मा, एस.आर., भारत का आन्दोलन, अनु प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ.सं. 36
25. मिश्र, संध्या, मोतीलाल नेहरू और भारतीय राजनीति, पूर्वोक्त, पृ.सं. 82
26. ब्राऊन ज्यूडित एम., नेहरू, ए पॉलिटिकल लाईफ, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2003, पृ.सं. 412
27. मिश्र, संध्या, मोतीलाल नेहरू और भारतीय राजनीति, पूर्वोक्त, पृ.सं. 112
28. नेहरू, जवाहरलाल, मेरी कहानी, पूर्वोक्त, पृ.सं. 236
29. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, भारतीय कांग्रेस तब और अब, पूर्वोक्त, 226
30. लिमये, मधु, महात्मा गाँधी एण्ड जवाहरलाल नेहरू, पूर्वोक्त, पृ.सं. 42
31. शुक्ल, भूपेन्द्रनाथ, युग निर्माता नेहरू, आकाश दीप पब्लिकेशन्स, 2005, पृ.सं. 186
32. शरण, डॉ. गिरीराज, नेहरू ने कहा था, प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, पृ.सं. 112